तिरछी नज़र / बलजीत बल्ली

उडता पंजाब ... . यह रिविऊ नहीं ... सिर्फ शर्मिंदगी .... .
काश ! मैं सैंसर बोर्ड की तरफ से लगाऐ कट्स , फ़िल्म के बारे गाहे - बगाहे छपीं कुछ टिप्पणियाँ और . . सुप्रीम कोर्ट के जज की तरफ से वकील को कट नंबर 5 के बीच वाले शब्द अदालत में बोल कर सुनाने की घटना को गंभीरता के साथ लिया होता तो कम से कम अपने परिवार दे दो सदस्यों के साथ तो उडता पंजाब देखने कभी न जाता . मैं सोचा था कि कुछ हिंदी फ़िल्में और नाटकों की तरह किसी उचित मौके पर कुछ गालियाँ या अश्लील शब्दों का प्रयोग किया गया होगा. .
शनिवार को चंडीगढ़ के सैक्टर 17 में नये बने टी डी आई माल में जब फ़िल्म देखी तो बार - बार मुझे सिर्फ़ एक ही एहसास हुआ .. शर्मिन्दगी का . . शर्मिन्दगी सिर्फ इस बात की नहीं कि मुझे अपने परिवार के फीमेल मैंबर के साथ बैठ कर लच्चर से लच्चर बेहूदा और गंदी गालियाँ सुननी पड़ीं, बल्कि इस बात की भी है कि हमारा, हमारे पंजाब का और हमारे लोगों का कैसा अक्स पेश किया गया है . करीना कपूर या एक आध आर्टिस्ट को छोड़ कर सारी फ़िल्म में कोई ऐसा करैकटर ही नहीं जो गंदी गालियों से बिना कोई डायलोग पूरा करता हो, गाली से बिना फ़िल्म के किस किरदार का कोई एक्शन ही पूरा नहीं होता था . यहां तक की बिहार की प्रवासी मज़दूर की भूमिका निभा रही आलिया भट्ट से भी बार - बार गालियाँ निकलवाई गई।
यह ठीक है कि हर समाज और संस्कृति की तरह पंजाबी समाज में भी लोगों की तरफ से अश्लील शब्दों का प्रयोग, गालियाँ और असभिअक मानी जाती भाषा का प्रयोग होती है . यह भी सत्य है कि गुस्से में आकर पंजाबी भी ऐसी भाषा का प्रयोग करते हैं , यह भी ठीक है कि कई बार फ़िल्में और नाटकों में किसी उचित मौके सिर्फ़ चुनिंदे पात्रों के मुँह से ऐसे बोल- कुबोल बुलाए भी जाते हैं . इह भी सत्य है कि हिंदी फ़िल्में और संगीत एलबमों में अश्लील ढंग के साथ जितना नंगापन और अश्लीलता दिखाई जा रही है, यह दिनों- दिन हद बन्ने पार कर रही है. इस के आगे हौलीवुड्ड की रंगत भी फीकी पड़ने लगी है .
यह भी सत्य है कि अश्लीलता और लच्चरता के अर्थ भी समय और स्थान मुताबिक बदलते रहते हैं और रोज़मर्रा भी बदल रहे हैं परन्तु फिर भी यह कहाँ की कलाकारी है कि पंजाबी फ़िल्म का हर करैकटर बिना गाली से कोई बात ही न करे .ये कहाँ का इंसाफ़ है कि हर पंजाबी माँ - बहन की गाली से बिना कोई वार्तालाप ही न करे? दुख इस बात का है कि इस दृश्य को पंजाबी स्वभाव के एक लक्षण के तौर पर नहीं बल्कि इस के डौमीनैंट चरित्र (ट्रेट) के तौर पर पेश किया गया है जो कि वास्तव में है नहीं . गाली देना और नशे लेना पंजाबी करैकटर का एक पक्ष है मुकम्मल तस्वीर नहीं .
मेरी यह लिखित पढ़ने वाले या फ़िल्म देखने वाले लोग यह ख़ुद सोचने कि हमारे पंजाबी परिवारों और पंजाबी लोगों और पंजाबी परिवारों में से कितने प्रति सदी ऐसे हैं जो गाली से बिना बात ही नहीं करते? मैं ख़ुद गाँव का जम - पल हूं और पत्रकार होने के नाते गाँवों के अनेकों लोगों और परिवारों के साथ

रोज़ाना राब्ता होता है जिन में से बड़ी बहुसंख्यक में बात - बात पर ऐसीं गालियों निकालने का कोई रिवाज़ नहीं .
फ़िल्म के को- लेखक और डायरैक्टर अभिषेक चौबे यू पी के जंमपल हैं . उस ने ऐसा क्यों किया? उसको हमारे पंजाबी समाज का अक्स उसे ही सिर्फ़ ऐसा कैसे
दिखा? क्या सुभावकि ही उसने इस को पंजाबी स्वभाव मान कर ऐसी पेशकारी की या इस पीछे कोई विशेष मंशा थी? इन सवालों के जवाब तो अभी नहीं मिले परन्तु एक हकीकत का संकेत ज़रूर मिलता है. फिल्म में उसने हर क्षेत्र के 90 प्रतिशत पंजाबियों को करप्पट और बीमार मानसिकता वाले दिखाया है परन्तु मुझे शक है कि उसकी और उसके साथी फिलमकारों ने जाने या अनजाने अपनी बीमार मानसिकता का इज़हार किया है कयोंकि मानी जाती भाषा और अश्लील शब्दों का प्रयोग एक पब्लिक मंच पर कर के ऐसी मन से- दशा वालों को ही सकून मिल सकता है . में सिनेमा हाल में बैठा देख रहा था कि बार बार गालियों की इस्तेमाल करो सुन कर मनचले नौजवान दर्शकों का एक हिस्सा हँस हँस कर मज़े ले रहा था .
जहाँ तक सम्बन्ध है ड्रग के मामलो में पंजाब की तस्वीर पेश करने का . यह ठीक है कि केमिकल नशीले पदार्थों से बने ड्रग्स , पंजाबी समाज और ख़ास कर कर नौजवान पीढ़ी की बहुत गंभीर समस्या है जिस को फ़िल्म में दिखाने का यत्न किया गया है . पर मुझे लगता है कि इस समस्या को भी बहुत सतही ढंग के साथ ही दिखाया गया है, न ही इस में कोई गहराई है और न ही इस के ख़ात्मे का कोई रास्ता बताया गया . लच्चर भाषा के अनावश्यक प्रयोग ने फ़िल्म के असली विषय की गंभीरता को मध्म पाया है .
जहाँ तक ड्रग्गज़ और समगलिंग के कारोबार को राजनैतिक नेताओं की सरप्रस्ती और पुलिस के साथ मिली भुगत के साथ चलता दिखाया गया है, राजनीतिज्ञों का दंभी और दोगला किरदार तो इस की अपेक्षा अधिक और बहुत बढ़िया तरीको साथ बहुत सी हिंदी फ़िल्में में पेश किया जाता रहा है . जो कुछ इस फ़िल्म में नशों बारे दिखाया गया है इस से कई गुणा अधिक वास्तविकता लोग पहले ही जानते हैं .
मैं एक नौजवान लेखक जसप्रीत सिंह की इस टिप्पणी के साथ सहमत हूँ कि पंजाब का नाम इस फ़िल्म के साथ ना भी जोड़ा जाता तो भी यह एक आम हिंदी फ़िल्म की तरह ही देखी जानी थी .
यह ठीक है कि इस में काम करने वाले प्रमुख एक्टरों ने अपने - अपने कैरेक्टर बाखूबी निभाएं हैं परन्तु समूचे तौर पर यह फ़िल्म बेजोड़ सी लगती है . फिल्म का अंत इस तरह एक दम होता है कि दर्शक सोचता ही रह जाता है , " बस ख़त्म " .
 फिल्म बनाने वालों ने दर्शकों के साथ फ़िल्म के नाम के मामलो में भी ठग्गी मारी है . समझ नहीं आई इस मूवी का नाम " गिरता पंजाब " क्यों नहीं रखा गया?
जहाँ तक अपने विचार ज़ाहिर करने या सामाजिक घटनाकर्मों को कलाकार की नज़र के साथ पेश करने की आज़ादी देने का सवाल है, में भी इस के हक्क में हूँ परन्तु कोई भी ऐसी आज़ादी खला में नहीं

होती , ऐब्सोलिऊट (Absolute) आज़ादी कभी भी और किसी को भी नहीं होती . यह समय, स्थान और सामाजिक हालत के अनुकूल (रैलेटिव) होती है .

यदि इस फ़िल्म पर राजनीति न होती और अकाली और दूसरे लोग इसका विरोध करने की मूर्खता न करते तो यह फिल्म और बहुत सी फिल्मों की तरह ही हफ़्ता -दो हफ्ते बड़ी मुशकिल से चलती . तीखे विवाद होने के कारण फ़िल्म अब लोगों ने देखनी भी ज़रूर है . इस लिए अकाली दल और बे जे पी दोनों इस को लाभ पहुंचाने के ज़िम्मेदार हैं .
इस गठजोड की लीडरशिप के इस कदम पे " जूते भी खाये और प्याज़ भी .. " वाली पंजाबी लोकोक्ति ख़ूब फब्ती है . ड्रग्गज़ के मामले बदनामी भी मोल ली और फ़िल्म को भी नहीं रोक सगे. .
फ़िल्म प्रोड्यूसर कपूर फैमली ने करोड़ों की कमाई भी कर लेनी है . पर एक गलत परम्परा शुरू हो गई है कि फ़िल्में या किसी ओर पेशकारी में किसी भी क्रूड ढंग के साथ - किसी वर्ग, किसी सूबे या किसी क्षेत्र के लोगों का ऐसा ग़ैर- हकीकी अक्स कला के नाम और पेश किया सकता है . अफसोस तो इस बात का भी है कि इस रवायत पर हमारे मुल्क की सुप्रीम अदालत की भी मोहर लग गई है .

19 जून 2016

बलजीत बल्ली
संपादक
बाबूशाही डाट काम
चंडीगढ़
+91- 9915177722

--